रूढ़ि के चारों ओर एक ढांचे का निर्माण हो जाता है तो वह संस्था का रूप ले लेती है। इस प्रकार किसी भी संस्था का विकास क्रमिक होता है।

प्रत्येक संस्था के पीछे कोई न कोई विचार (idea) अवश्य होता है। किसी न किसी उद्देश्य (Purpose) की पूर्ति के लिए संस्था का निर्माण किया जाता है। प्रत्येक संस्था का ढांचा होता है जो कार्य-विधियों (Procedures) और नियमों, आदि से मिलकर बनता है। प्रत्येक संस्था को कुछ अधिकार और समाज का समर्थन प्राप्त होता है। प्रत्येक संस्था की पहचान के लिए भौतिक और अभौतिक प्रतीक भी पाए जाते हैं।

भारतीय ग्रामों में भी हमें विभिन्न सामाजिक संस्थाएं देखने को मिलती हैं जिनके माध्यम से ग्रामीणों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। ये संस्थाएं ही ग्रामीण संस्कृति की रक्षक हैं। ग्रामीण लोगों के व्यवहार में संस्थाएं ही अनुरूपता पैदा करती हैं, सामाजिक नियन्त्रण बनाये रखती हैं और लोगों का मार्गदर्शन करती हैं। संस्थाएं ही ग्रामीण समाज में व्यक्ति की प्रस्थिति, अधिकार और दायित्वों का निर्धारण करती हैं। इस प्रकार ग्रामीण संस्थाएं ग्रामीण जीवन को आधार प्रदान करती हैं।

ग्रामीण संस्थाएं सरल प्रकृति की होती हैं। उनमें धर्म की प्रधानता है। ग्रामीण सामाजिक संस्थाओं पर परिवार, जाति और रूढ़ियों का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। ग्रामों में संस्थाओं की बहुलता पाई जाती है। ग्रामीण संस्थाओं के अध्ययन द्वारा ही हम ग्रामीण समाज और लोगों के व्यवहार को भली-भांति समझ सकते हैं। यदि हम यह जानना चाहते हैं कि ग्रामीण लोग अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे करते हैं। उनकी संस्कृति शहरों से किस प्रकार भिन्न है, वे नियन्त्रण कैसे बनाये रखते हैं, उनमें कौन-कौन से सामाजिक परिवर्तन आ रहे हैं, उनकी प्रमुख सामाजिक समस्याएं कौन-सी हैं और उनका समाधान कैसे किया जा सकता है, तो हमें ग्रामीण सामाजिक संस्थाओं का अध्ययन करना होगा। संस्थाओं के अध्ययन के आधार पर ही हम ग्रामीण पुनर्निर्माण का कार्य सुचारु रूप से कर सकेंगे। संयुक्त परिवार, विवाह, नातेदारी, धर्म, शिक्षा, ग्राम पंचायत, जाति पंचायत, जजमानी व्यवस्था, आदि ग्रामीण भारत की प्रमुख सामाजिक संस्थाएं हैं। यहां हम संक्षेप में उन्हीं का उल्लेख करेंगे।

1. परिवार
(FAMILY)

ग्रामीण सामाजिक संस्थाओं में परिवार का प्रमुख स्थान है। परिवार ही ग्रामीण समाज की मुख्य आधारशिला है। प्रारम्भ में परिवार का निर्माण प्राणीशास्त्रीय आवश्यकताओं के कारण हुआ जो आगे चलकर मानव की अनेक सामाजिक सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बन गया। परिवार के कारण ही आज मानव जाति अमर बनी हुई है। मानव के उद्विकास के साथ-साथ परिवार के अनेक रूप प्रकट हुए हैं। विभिन्न संस्कृतियों में हमें परिवार के अनेक रूप देखने को मिलेंगे। **मैकाइवर** परिवार को परिभाषित करते हुए लिखते हैं, ''परिवार वह समूह है जो कि लिंग सम्बन्ध पर आधारित होता है और यह काफी छोटा एवं इतना स्थायी है कि बच्चों की उत्पत्ति और पालन-पोषण करने योग्य है।''[1] इस परिभाषा

1 "The Family as a group defined by a sex relationship sufficiently precise and enduring to provide for the procreation and upbringing the children."
—MacIver and Page, *Society*, p. 238.

से स्पष्ट है कि परिवार ही वह समूह है जहां स्त्री-पुरुष के यौन सम्बन्धों को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है। परिवार में ही सन्तानें जन्म लेती हैं और उनका भरण-पोषण किया जाता है।

ग्रामीण एवं नगरीय परिवारों में भी भेद पाया जाता है। ग्रामीण परिवार ग्रामीण पर्यावरण और कारकों से प्रभावित होते हैं। कृषि की प्रधानता एवं प्रकृति पर निर्भरता ग्रामीण समाज की मूल विशेषताएं हैं जो परिवार को भी प्रभावित करती हैं। ग्रामीण परिवार का सबसे छोटा रूप पति-पत्नी और बच्चों से मिलकर बनता है। समाज के विकास के साथ-साथ परिवार के अनेक रूप प्रकट हुए हैं। **डॉ. रिवर्स** का मत है कि आखेट एवं भोजन संग्रह की अवस्था में गोत्र का प्रचलन रहा होगा। पशुपालन और खुरपी कुदाली कृषि (Hoe Agriculture) की अवस्था में मातृ-स्थानीय संयुक्त परिवार रहे होंगे। पशुपालन के साथ-साथ हल से कृषि कार्य किया जाने लगा तो पितृ-स्थानीय संयुक्त परिवार का उदय हुआ। वर्तमान औद्योगिक पूंजीवादी व्यवस्था ने केन्द्रीय अथवा नाभिक परिवार जिसमें माता-पिता और अवयस्क बच्चे होते हैं, को जन्म दिया है। ग्रामीण परिवार को स्पष्टत: समझने के लिए हम यहां उसकी विशेषताओं का उल्लेख करेंगे।

ग्रामीण परिवार की विशेषताएं (Characteristics of Rural Family)

विश्व के सभी कृषि प्रधान समाजों में परिवार का संयुक्त रूप देखने को मिलता है। इसमें केन्द्रीय परिवार की तुलना में सदस्यों की संख्या अधिक होती है और दो तीन पीढ़ियों के सदस्य साथ-साथ रहते हैं। ग्रामीण परिवार अधिकांशतः पितृ-स्थानीय, पितृवंशीय एवं पितृसत्तात्मक होते हैं। ऐसे परिवारों में सम्पत्ति का हस्तान्तरण पिता से पुत्र का होता है, बच्चों का वंश परिचय पिता के परिवार द्वारा दिया जाता है और विवाह के बाद पत्नी पति के घर पर आकर निवास करती है। ग्रामीण पर्यावरण ने ग्रामीण परिवारों को प्रभावित कर उन्हें एक विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है। यही कारण है कि ग्रामीण परिवार की विशेषताएं अन्य परिवारों से भिन्न हैं। ग्रामीण परिवार की मूल विशेषताएं इस प्रकार हैं :

(1) **अधिकाधिक सजातीयता** (Greater Homogeneity)—**देसाई** कहते हैं कि ग्रामीण परिवार नगरीय परिवारों की तुलना में अधिक सजातीय, स्थिर, संगठित तथा सजीव रूप से कार्य करने वाला होता है। परिवार के पति-पत्नी, माता-पिता और बच्चों के बीच पाए जाने वाले सम्बन्ध शहरी परिवारों की अपेक्षा अधिक स्थिर और प्रगाढ़ होते हैं। सदस्यों के विचारों, विश्वासों, आदर्शों, मूल्यों और कार्य करने के तरीकों में समानता पाई जाती है।

(2) **संयुक्त परिवार की प्रधानता** (Dominance of Joint Family)—ग्रामीण परिवारों में संयुक्त परिवार की प्रधानता होती है। ऐसे परिवारों में तीन या अधिक पीढ़ियों के सदस्य साथ-साथ रहते और खाते-पीते हैं। उनकी सम्पत्ति सामूहिक होती है और वे सभी सामान्य पूजा में भाग लेते हैं। ऐसे परिवारों में कई बार विवाह सम्बन्धी व अन्य नातेदार भी आकर रहने लगते हैं। विधवा और परित्यक्ता बहिन और बेटियां भी पुनः पिता के संयुक्त परिवार में आकर रहने लगती हैं। परिवार के सभी सदस्य परस्पर अधिकारों एवं दायित्वों से बंधे होते हैं।

(3) **कृषक गृहस्थी पर आधारित** (Based on Peasant Household)—ग्रामीण परिवारों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। परिवार के सभी सदस्य कृषि कार्य में लगे होते हैं। इसलिए ही ग्रामीण परिवारों को कृषक परिवार भी कहते हैं। कृषक गृहस्थ को बल प्रदान करने में

नातेदारी सम्बन्ध, सामूहिक निवास, सामूहिक भूमि तथा आर्थिक क्रियाओं का सामूहिक रूप से सम्पन्न करना महत्वपूर्ण कारण हैं। परिवार की भूमि सामूहिक होने से सभी सदस्य सहयोग द्वारा उस पर कार्य करते हैं। ग्रामीण परिवार एक आर्थिक इकाई भी है, जिसका संचालन परिवार का वयोवृद्ध व्यक्ति करता है। सामूहिक निवास सदस्यों में समान मनोवैज्ञानिक लक्षणों को उत्पन्न करता है।

(4) **अधिकाधिक अनुशासन एवं अन्योन्याश्रितता** (Greater Discipline and Interdependence)—नगरीय परिवारों की तुलना में ग्रामीण परिवार अधिक अनुशासित होते हैं। वहां बड़े बुजुर्गों का पूरा सम्मान पाया जाता है और उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने पर सामाजिक निन्दा का सामना करना होता है। परिवार का वयोवृद्ध व्यक्ति सभी सदस्यों पर नियन्त्रण रखता है।

परिवार ही व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व मनोरंजन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। अतः सदस्यों में परस्पर निर्भरता पाई जाती है। बीमारी, बुढ़ापा और कठिनाई के समय सभी सदस्य परस्पर एक-दूसरे की सहायता करते हैं। नगरों की तरह गांवों में विशिष्ट हितों की पूर्ति करने वाली द्वैतीयक संस्थाएं नहीं हैं। अत: परिवार के सदस्य ही एक-दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति में सहयोग प्रदान करते हैं। इससे पारस्परिक निर्भरता बढ़ जाती है।

(5) **पारिवारिक अहंमन्यता की प्रबलता** (Dominance of Family Ego)—परिवार ही ग्रामीण सामाजिक संगठन की आधारशिला है। परिवार का प्रभाव सभी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक और धार्मिक क्षेत्रों में देखा जा सकता है। ग्रामीण परिवार के सदस्यों में पारस्परिक आश्रितता एवं व्यक्तिगत रूप से परिवार पर निर्भरता नगरीय परिवारों की तुलना में अधिक पाई जाती है। इसके परिणामस्वरूप सदस्यों में परस्पर सहयोग और एकता पाई जाती है। परिवार में व्यक्तिगत भावना के स्थान पर सामूहिक चेतना पाई जाती है। परिवार के गौरव को व्यक्ति अपना गौरव समझता है। परिवार के किसी सदस्य द्वारा घृणित एवं निन्दनीय कार्य करने पर सारे परिवार की प्रतिष्ठा को आंच आती है। इसी प्रकार से परिवार के किसी सदस्य द्वारा प्रशंसनीय कार्य करने पर परिवार की प्रतिष्ठा बढ़ जाती है।

(6) **परिवार में पिता की सत्ता** (Authority of Father in Family)—ग्रामीण परिवार अधिक संगठित और अनुशासित होता है, क्योंकि परिवार के मुखिया का सदस्यों पर अत्यधिक नियन्त्रण होता है। एक प्रकार से उसकी परिवार में निरंकुश सत्ता होती है। परिवार का मुखिया पिता अथवा कोई अन्य वयोवृद्ध पुरुष होता है। वही परिवार में आयु व लिंग के आधार पर कार्यों का विभाजन करता है। परिवार के सदस्यों के विवाह का प्रबन्ध, सम्पत्ति की देख-रेख, शिक्षा, भरण-पोषण, आदि सभी कार्यों का भार उसी पर होता है। गांव पंचायत और जाति पंचायत में मुखिया ही परिवार का प्रतिनिधित्व करता है। पारिवारिक विवादों को भी वही तय करता है। ग्रामीण परिवार के मुखिया की विभिन्न भूमिकाओं का उल्लेख करते हुए **देसाई** लिखते हैं, ''परिवार के मुखिया को परिवार के शासक, पुरोहित, गुरु, शिक्षक तथा व्यवस्थापक होने की सत्ता और अधिकार रहे हैं।''[1]

[1] "The head of the family has had the rights and authority to be the ruler, the priest, the teacher, the educator and the manager of the family."
—A. R. Desai, *op. cit.*, p. 33.

(7) **विभिन्न कार्यों में घनिष्ठ सहभागिता** (Closer Participation in Various Activities)—ग्रामीण परिवार के सदस्य कृषि कार्य अथवा कुटीर व्यवसाय में परस्पर सहयोग करते हैं। प्रत्येक दिन को वे व्यावहारिक रूप में साथ-साथ व्यतीत करते हैं। हर व्यक्ति अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार कार्य को पूर्ण करने में प्रत्यक्ष योग देता है। इसके विपरीत, नगरीय परिवार के सदस्य विभिन्न व्यवसाय में लगे होने के कारण अधिकांश समय घर से बाहर ही रहते हैं और बहुत ही कम समय के लिए परिवार के सभी सदस्य साथ-साथ रहते हैं। उनके लिए तो परिवार रात्रि विश्राम स्थल ही है।[1]

ग्रामीण परिवारवाद (Rural Familism)

सोरोकिन व **जिमरमैन** का मत है कि सभी कृषि प्रधान समाजों के सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक संगठनों पर ग्रामीण परिवार की छाप अंकित रही है। इन्हीं विशेषताओं को परिवारवाद कहते हैं। साधारणतः **परिवारवाद का अर्थ है समाज में व्यक्ति के स्थान पर परिवार को अधिक महत्व प्रदान करना। बर्गेस** एवं **लॉक** इसकी परिभाषा करते हुए लिखते हैं, "सामान्य रूप में परिवारवाद या पारिवारिकता का अर्थ है व्यक्तिगत सदस्यों के हित हो अधीनस्थ मान कर परिवार समूह के कल्याण को केन्द्रीय रूप में स्वीकार करना।"[2] परिवारवाद को स्पष्ट करते हुए **सोरोकिन** और **जिमरमैन** लिखते हैं, "चूंकि परिवार ग्रामीण सामाजिक संसार की मौलिक सामाजिक संस्था रहा है, इसलिए यह आशा करना स्वाभाविक है कि ग्रामीण परिवार के लक्षणों की छाप कृषि-समूहों के समस्त सामाजिक संगठन पर अंकित हो। दूसरे शब्दों में अन्य सभी सामाजिक संस्थाएं तथा मौलिक सामाजिक सम्बन्ध ग्रामीण सामाजिक सम्बन्धों के प्रतिमानों के अनुरूप निर्मित हुए हैं तथा उन्हीं से वे ओत-प्रोत हैं। 'परिवारवाद' वह संज्ञान है जो इस प्रकार सामाजिक संगठन को प्रकट करती है....... इस प्रकार समाज के विशिष्ट रूप में परिवारवाद प्रमुख एवं मौलिक लक्षण है।"[3]

सोरोकिन, जिमरमैन और अन्य विद्वानों ने ग्रामीण समुदाय और सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों पर पारिवारिकता की छाप का उल्लेख किया है। हम यहां उन विभिन्न ग्रामीण सामाजिक क्षेत्रों का उल्लेख करेंगे जिन पर परिवारवाद का प्रभाव अंकित है :

(1) ग्रामीण समाज में **बाल विवाह** पाए जाते हैं और उनकी संख्या भी अधिक होती है।

(2) परिवार ही सामाजिक उत्तरदायित्व की इकाई है, क्योंकि वह समाज की भी इकाई है। कर की अदायगी व **सामाजिक दायित्वों का निर्वाह** परिवार द्वारा ही सामूहिक रूप से किया जाता है। परिवार ही व्यक्ति को **सामाजिक प्रस्थिति प्रदान** करता है।

(3) परिवार ही **सामाजिक मानदण्डों का आधार** है। माता-पिता के प्रति सन्तानों एवं पति के प्रति पत्नी के कर्तव्यों का निर्धारण नैतिक संहिता, धार्मिक सिद्धान्तों और सामाजिक व कानूनी प्रतिमान द्वारा किया जाता है।

---

1. "Hence the home becomes only a temporary nightstay for the members of the urban family." —A. R. Desai, *Ibid*, p. 33.
2. "By familism is meant in general the acceptance of the welfare of the family group as the central value to which the interest of individual members are subordinate." —Burgess and Locke, *The Family* (1950) p. 64.
3. ... II, p. 41.

(4) परिवार की छाप **ग्रामीण राजनैतिक स्वरूप** पर भी पाई जाती है। शासक व शासित के बीच सम्बन्ध पिता पुत्र की ही भांति होते हैं। परिवार के मुखिया की भांति ही राजनैतिक मुखिया होता है।

(5) ग्रामीण समाज में समझौता सम्बन्धों (Contractual Relations) के स्थान पर **सहयोगी सम्बन्ध** पाए जाते हैं।

(6) ग्रामीण आर्थिक संरचना में परिवार उत्पादन, उपभोग व विनिमय की इकाई है। ग्रामीण समाज में मुद्रा के स्थान पर वस्तु विनिमय का अधिक प्रचलन रहा है। **आर्थिक सम्बन्धों** में परिवारवाद की स्पष्ट छाप देखी जा सकती है।

(7) ग्रामीण धर्म एवं संस्कारों का उद्देश्य परिवार की सम्पत्ति व सुरक्षा है। **पूर्वज और देवी-देवता की पूजा का स्वरूप** भी पारिवारिक है।

(8) ग्रामीण समाज में परम्परा का अधिक महत्व है और वही समाज में कठोरतापूर्वक शासन करती है।

2. ग्रामीण संयुक्त परिवार
(RURAL JOINT FAMILY)

संयुक्त परिवार प्रणाली भारतीय समाज की प्रमुख विशेषता रही है। आदिकाल से ही यह हिन्दू समाज व्यवस्था एवं ग्रामीण समाज की आधारशिला रही है। सम्पूर्ण ग्रामीण भारत में ऐसे परिवारों की बहुलता रही है जिसमें दादा-दादी, माता-पिता, पुत्र और पौत्र साथ-साथ निवास करते हों, जिनकी सम्पत्ति सामूहिक हो और जो सामूहिक रूप से आर्थिक क्रियाओं में भाग लेते हों तथा पूजा एवं उत्सव का आयोजन सामूहिक रूप से ही करते हों।

संयुक्त परिवार को परिभाषित करते हुए **श्रीमती इरावती कर्वे** लिखती हैं, "संयुक्त परिवार उन व्यक्तियों का एक समूह है जो साधारणतया एक मकान में रहते हैं, जो एक रसोई में बना भोजन करते हैं, जो सामान्य सम्पत्ति के स्वामी होते हैं और जो सामान्य पूजा में भाग लेते हैं तथा जो किसी न किसी प्रकार से एक-दूसरे के रक्त सम्बन्धी हैं।"[1] **डॉ. देसाई** लिखते हैं, "हम उस परिवार को संयुक्त परिवार कहते हैं जिसमें मूल परिवार से अधिक पीढ़ियों के सदस्य (अर्थात् तीन या अधिक पीढ़ियों के सदस्य) रहते हों और जिसके सदस्य एक-दूसरे से सम्पत्ति, आय और पारस्परिक अधिकारों तथा कर्तव्यों द्वारा सम्बद्ध हों।"[2]

डॉ. दुबे संयुक्त परिवार को परिभाषित करते हुए लिखते हैं कि यदि कई परिवार एक साथ रहते हों और उनमें निकट का सम्बन्ध हो, एक ही स्थान पर भोजन करते हों और एक आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करते हों तो उन्हें उनके सम्मिलित रूप में संयुक्त परिवार कहा जा सकता है।

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि संयुक्त परिवार में एकाकी परिवार की तुलना में सदस्यों की संख्या अधिक होती है। यह एक आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करता है। धार्मिक व सामाजिक दृष्टि से भी यह एक इकाई की भांति ही कार्य करता है और इसके सदस्य परस्पर रक्त सम्बन्धों से सम्बन्धित होते हैं।

1 Karve Irawati, *Kinship Organisation in India*, p. 10.
2 I. P. Desai, *The Joint Family in India*, Sociological Bulletin, Vol. No. 2, Sept. 1956, p. 148.

ग्रामीण संयुक्त परिवार की विशेषताएं (Characteristics of Rural Joint Family)

(1) **बड़ा आकार**—संयुक्त परिवार में तीन या अधिक पीढ़ियों के अनेक सदस्य व अन्य रिश्तेदार साथ-साथ रहते हैं जो परिवार के बड़े आकार का निर्माण करते हैं।

(2) **सामान्य निवास**—संयुक्त परिवार के सभी सदस्य अधिकांशतः एक ही मकान में निवास करते हैं। सदस्यों की संख्या बढ़ जाने पर पैतृक घर के पास ही एक या अधिक भाइयों द्वारा पृथक् निवास बना लिया जाता है। अलग रहने पर भी उत्सव एवं त्यौहार पैतृक घर में ही मनाये जाते हैं।

(3) **सामान्य उपासना**—प्रत्येक परिवार के अपने कुछ पूर्वज और देवी-देवता होते हैं। पूजा और धार्मिक अनुष्ठानों में परिवार के सभी सदस्य सामूहिक रूप से भाग लेते हैं।

(4) **सामूहिक सम्पत्ति**—संयुक्त परिवार के सभी सदस्यों की भूमि, मकान और पूंजी सामूहिक होती है। सभी व्यक्ति कमाकर सामूहिक कोष में देते हैं और परिवार में विवाह, जन्म एवं मृत्यु तथा अन्य अवसरों पर होने वाले व्यय का सामूहिक कोष में से भुगतान करते हैं।

(5) **सहयोगी व्यवस्था**—संयुक्त परिवार का अस्तित्व ही सहयोग पर टिका हुआ है। सहयोग के आधार पर ही परिवार अपने सभी सदस्यों की आवश्यकताएं पूरी कर पाता एवं एक आर्थिक इकाई के रूप में उत्पादन का कार्य सम्भव हो पाता है।

(6) **कर्ता का सर्वोच्च स्थान**—भारतीय ग्रामीण संयुक्त परिवार पितृ-प्रधान है। परिवार में पिता अथवा वयोवृद्ध पुरुष ही परिवार की देख-रेख और नियन्त्रण करता है। परिवार के अन्य सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं और अनुशासन में रहते हैं।

(7) **पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य**—संयुक्त परिवार के सभी सदस्य परस्पर अधिकारों और दायित्वों से बंधे होते हैं। बड़े छोटों पर अपने अधिकारों का प्रयोग करते हैं तो छोटे बड़ों के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हैं। संयुक्त परिवार में प्रत्येक व्यक्ति अपने दायित्व को निभाता है।

ग्रामीण संयुक्त परिवार के कार्य अथवा लाभ (Functions or Merits or Rural Joint Family)

संयुक्त परिवार ग्रामीण समाज में अनेक उपयोगी कार्य करता है जिससे समाज व्यवस्था सुचारु रूप से चलती है। ग्रामों में कृषि की प्रधानता के कारण तो संयुक्त परिवार का महत्व और भी बढ़ जाता है।

संयुक्त परिवार ही **बच्चों के समुचित लालन-पालन में योग देता है।** परिवार में दादा-दादी सरलता से बच्चों की देखरेख कर लेते हैं और बीमारी, आदि के समय अपने अनुभव के आधार पर छोटा-मोटा इलाज स्वयं ही करने में समर्थ होते हैं।

संयुक्त परिवार **समाजीकरण का कार्य** भी करता है। बच्चा परिवार के विभिन्न सदस्यों के सम्पर्क में आकर प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करता है और मानवीय गुणों को सीखता है।

संयुक्त परिवार **श्रम-विभाजन का भी अच्छा उदाहरण** पेश करता है। स्त्रियां गृह कार्य और कृषि से सम्बन्धित छोटा-मोटा कार्य करती हैं तो पुरुष बाह्य कार्य और ऐसे कार्य करते हैं जिसमें अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है। बालक छोटे-मोटे कार्य द्वारा अपना योग देते हैं।

संयुक्त परिवार अपने सदस्यों के लिए **आपत्तियों का बीमा** है। बीमारी, बुढ़ापा, दुर्घटना एवं शारीरिक-मानसिक अयोग्यता की स्थिति में परिवार ही भरण-पोषण और इलाज का खर्च उठाता है। वह विधवा और परित्यक्ता बहिनों व बेटियों को भी संरक्षण प्रदान करता है।

संयुक्त परिवार **अपने सदस्यों पर अनुशासन और नियन्त्रण** बनाये रखता है। यही सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों, आदि का पालन कराकर **संस्कृति की रक्षा** भी करता है।

संयुक्त परिवार ही व्यक्तिवादी प्रवृत्ति पर रोक लगाता है और उसके स्थान पर **सामूहिकता को प्रोत्साहन** देता है। सामूहिकता की भावना ही आगे चलकर सदस्यों में **राष्ट्र प्रेम और एकता की भावना जाग्रत** करती है।

संयुक्त परिवार अपने सदस्यों के लिए **मनोरंजन भी प्रदान** करता है। छोटे बच्चों के साथ उनकी बोली में बोलकर सदस्य प्रफुल्लित महसूस करते हैं। संयुक्त परिवार में उत्सव और त्यौहार भी चलते ही रहते हैं। बड़े परिवार में रिश्तेदारों का आना-जाना भी बना रहता है।

संयुक्त परिवार अपने सदस्यों को **आर्थिक संरक्षण ही नहीं, वरन् सामाजिक सुरक्षा भी प्रदान** करता है। संयुक्त परिवार ने **समष्टिवादी समाज** के निर्माण में योग दिया है। अपनी उपयोगी एवं महत्वपूर्ण भूमिकाओं के कारण ही संयुक्त परिवार आज भी ग्रामीण समाज में अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं।

ग्रामीण संयुक्त परिवार के दोष (Demerits of Rural Joint Family)

प्रत्येक संस्था की उत्पत्ति समय की देन होती है। जिन परिस्थितियों में संयुक्त परिवार का जन्म हुआ, वे संयुक्त परिवार के अनुकूल थीं। उस समय की कृषि व्यवस्था ने संयुक्त परिवार प्रथा को अनिवार्य बना दिया था, किन्तु समय के साथ-साथ परिस्थितियां बदलीं और संयुक्त परिवार में कोई दोष उत्पन्न हो गए। संयुक्त परिवार के प्रमुख दोष इस प्रकार हैं :

(1) संयुक्त परिवार व्यक्ति की **कुशलता में बाधक** है। संयुक्त परिवार में कमाने वाले और न कमाने वाले को समान सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। कार्य की प्रेरणा समाप्त हो जाती है। परिवार आलसी और अकुशल लोगों का केन्द्र बन जाता है।

(2) संयुक्त परिवार में **होनहार बालकों के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो पाता,** क्योंकि यहां मूर्ख और बुद्धिमान सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाता है।

(3) संयुक्त परिवार सदस्यों की **गतिशीलता में भी बाधक** हैं। परिवार का स्नेहपूर्ण वातावरण सदस्यों को घर छोड़कर बाहर नहीं जाने देता। परिणामस्वरूप सदस्यों में क्षमता नहीं आ पाती।

(4) संयुक्त परिवार के सदस्यों में बच्चों, आय-व्यय और पक्षपात, आदि को लेकर पारस्परिक **द्वेष एवं कलह की स्थिति पाई जाती है।**

(5) ऐसे परिवार में **स्त्रियों की भी दुर्दशा** होती है। उन्हें कठोर नियन्त्रण में रहना और कभी-कभी गुलाम की तरह जीवन व्यतीत करना पड़ता है। ऐसे परिवार में स्त्रियों की स्वतन्त्रता का हनन होता है।

(6) संयुक्त परिवार में सदस्यों की अधिकता के कारण **गोपनीय स्थान का अभाव** होता है।